ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-10* January-2021
Anthology : The Research

सावरकर का राजनीतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान प्रासंगिकता

Savarkar's Political Thinking and Its Current Relevance

Paper Submission: 15/01/2020, Date of Acceptance: 26/01/2020, Date of Publication: 27/01/2021

तीर्थ प्रकाश
सह प्राध्यापक,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
मंगलौर, हरिद्वार,
उत्तराखण्ड, भारत

सारांश

सावरकर औपनिवेशिक काल में निडर क्रान्तिकारी रहे, जिन्होने भारतीय राष्ट्रवाद को हिन्दुत्व की बुनियादी अवधारणा के रूप में न केवल प्रस्तुत किया अपितु उस पर गौरन्वित होने के तमाम तर्क और विश्वासों को व्यापक किया। राष्ट्रीय आन्दोलन में उनका योगदान महत्वपूर्ण था जनसामान्य तक पहुचने में उनके विचारों को लम्बा समय लगा। किन्तु युवा वर्ग और राजनीतिक सत्ता के गलियारों में स्वीकार्यता की तीव्रता ने उन्हे गांधी के समकक्ष ला खडा किया। इसमें कोई सन्देह नही कि सावरकर का वैचारिक विमर्श साहस की अदभुत क्षमता और सत्ता प्राप्ति के तमाम गुणों से ओतप्रोत है। उनके चिन्तन में बहुसख्यक हितों के प्रति अपार समर्थन है, तो अल्पसंख्यक वर्गो के प्रति संकीर्णताओं और तंगदिली नज़र आती है। भारत की विविध एवं बहुलवादी संस्कृति में सावरकर का राजनीतिक चिन्तन सत्ता प्राप्ति का अल्पकालिक माध्यम बन सकता है किन्तु उसमें बदलते परिवेश के साथ सामान्य प्रासंगिताओं का नितानत अभाव नजर आता है।

Savarkar was a fearless revolutionary in the colonial period, who not only introduced Indian nationalism as the basic concept of Hindutva, but also broadened the logic and beliefs of being proud of it. His contribution to the national movement was important; it took a long time for his ideas to reach the masses. But the intensity of acceptance among the youth and the corridors of political power made him the equivalent of Gandhi. There is no doubt that Savarkar's ideological discourse is steeped in the amazing ability of courage and all the qualities of power. There is a lot of support for the majority interests in their thinking, then there is narrowness and persecution towards the minorities. In the diverse and pluralistic culture of India, Savarkar's political thought may become a short-term means of attaining power, but with the changing environment, there is an absolute lack of general relevance.

मुख्य शब्द : वीर दामोदर सावरकर, राष्ट्रभक्त, राष्ट्रीय चेतना।
Damodar Rao Savarakar, Nationalist, National Consciousness.

प्रस्तावना

वीर दामोदर सावरकर उन महान राष्ट्रभक्त योद्धाओं की पंक्ति में खड़े होने लायक औचित्यपूर्ण व्यक्तित्व है, जिन्होंने भारतीय गुलामी की बेडियों को मुक्त करने में अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। एक गुलाम राष्ट्र के भीतर की परिस्थितियों के मनोविज्ञान का प्रभाव बचपन से ही सावरकर के चरित्र पर अमिट रहा। वे दयानन्द सरस्वती के उस विचार को आत्मसात करने में शायद अधिक प्रवीण नजर आते हैं, जो कहता है "परतन्त्र सपनेहु सुख नाहि" अर्थात परतन्त्रता या गुलामी काल में तो स्वप्न भी सुख प्रदान नहीं कर सकते। जीवन के आरम्भिक वर्षो में ही यह स्पष्ट हो जाता है कि सावरकर अपने चिन्तन और कृत्यों से भारतीय जन मानस के 'प्रारब्ध एवं नियति' की आस्थावान मानसिकता को झकझोरकर, किसी नवीन राष्ट्रीय चेतना को संचारित/जाग्रत करने जा रहे हैं।

बचपन से ही सावरकर आत्मविश्वास और अपने को अभिव्यक्त करने की क्षमता के चलते दूसरों को प्रभावित कर नेतृत्व अर्जित करने में निपुण हो गये थे। उनका देशप्रेम कविताओं में और नेतृत्वशीलता संगठन एवं टोली निर्माण में परिलक्षित होता है। निश्चित तौर पर उनके चारित्रिक निर्माण एवं चिन्तन के

विस्तार में तत्कालीन परिस्थितियों, घटनाओं और आनुभाविकता का अहम् रोल रहा।[1]

महाराष्ट्र में अकाल और प्लेग से उत्पन्न दृश्यों की वीभत्स घटनाओं ने जब रैण्ड हत्या के आरोप में चापेकर बन्धुओं, वासुदेव, बालकृष्ण एवं महादेव रानाडे को फांसी पर लटकाया गया, तो सावरकर द्वारा लिखित कविता से महाराष्ट्र के जनमानस में नवीन राजनीतिक चेतना का संचार हो गया और यहीं से उनका जीवन चरित्र क्रान्तिकारी देशभक्ति की ओर उन्मुख हो गया और जीवन पर्यन्त उनकी स्वीकार्यता के साथ–साथ प्रगाढ़ता को प्राप्त होता गया।[2] 1905 के स्वदेशी आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई और तिलक के प्रभाव और आग्रह पर वे शैक्षिक प्रवास के लिए इग्लैण्ड गए किन्तु वहां भी उन्होंने भारत माँ की दासता से मुक्ति के सतत् प्रयास किया। फ्री इण्डिया सोसाइटी के माध्यम से प्रवासी भारतीयों के हितों की रक्षा की। इसी दौरान सावरकर की साहित्यिक क्षमता उनके लेखों, भाषणों, कविताओं और पुस्तकों के माध्यम से प्रत्यक्ष होने लगी और एक सच्चे देश के तौर पर उनकी ख्याति बढ़ने लगी थी। उनके चरित्र की अडिगता पर भारतीय चिन्तकों के साथ–साथ विदेशी चिन्तकों का प्रभाव भी पड़ा, विशेष रूप से दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, तिलक आदि के साथ इटली के महान चिन्तक मैजिनी की जीवनी को तो उन्होंने मराठी में अनुवादित कर दिया।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य वीर सावरकर के राजनीतिक चिन्तन और उसकी वर्तमान में प्रासंगिकता का अध्ययन करना है।

सावरकर का चिन्तन

प्रायः सावरकर को एक चिन्तक के तौर पर स्वीकार करने के लिए दो दृष्टिकोण सामने आते हैं। एक दृष्टिकोण जो उनके वैचारिक विरोधियों द्वारा प्रस्तुत किया गया, का मानना है कि सावरकर वो नही कर रहे जो वे चाहते थे, बल्कि उनके सम्पूर्ण कृत्यों को 'अंग्रेजो की कठपुतली'वाले चिन्तक के रूप में समझना चाहिए।

एक अन्य आधार पर उन्हें यह भी कहा गया कि वे भारत की स्वतंत्रता के विरूद्ध रहे है जिसके चलते उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में विरोधी गुटो एवं संगठनों के माध्यम से आलोचना की और उसे कमजोर बनाया जिसका लाभ अंग्रेजो को मिला।

आपने राजनीतिक हितों को साधने के लिए उन्होंने मुस्लिम लीग से गठबन्धन किया, जिसके तुष्टिकरण का वे हमेशा विरोध करते थे अर्थात उनका चिन्तन अवसरवादिताओं से भरा है।

एक ओर स्तन्त्रता के घोर समर्थक होते हुए भी एक चिन्तक कैसे अपने राजनीतिक विरोधी की हत्या में सम्मिलिति हो सकता है गाँधी हत्या के दोषियों में उनकी संलिप्तता मानी जाती है।[3] इससे उनके चिन्तन में वैचारिक समन्वयता का आभाव स्पष्ट होता है।

सावरकर के विचारों के समर्थक वर्ग के मानने वाले उन्हें एक महानकारी क्रांन्तिकारी एवं सच्चे देशभक्त एवं साहसिक स्वतन्त्रता सेनानी मानते हैं। जीवन को माँ भारती की आजादी के ध्येय में, शारीरिक एवं मानसिक यात्नाओं के कष्टों को झेलने के प्रेरक, अडिग चरित्र के प्रथम व्यक्ति हैं। वे जातिवाद के पुर्जोर विरोधी एवं धार्मिक आडम्बर और कुप्रथाओं के आलोचक माने जाते हैं भले ही उनके चिन्तन में मुस्लिम–पुष्टिकरण की प्रबल एवं तीखा विरोध हो और वे चाहे बहुसंख्यक वर्ग के हितों के पोषक स्पष्ट हो, किन्तु वे हिन्दू–मुस्लिम एकता के पक्षधर हैं।

जहाँ तक सावरकर के वैचारिक चिन्तन को रेखांकित करके समझने की बात है उन्हें निम्न प्रकार समझा जा सकता है।

सावरकर का 'हिन्दुत्व' तात्पर्य

हिन्दु महासभा के अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रथम बार उन्होंने हिन्दू शब्द की व्याख्या को सार्वजनिक किया 'हिन्दू' से उनका आशय था कि–"जो व्यक्ति सिन्धु से लेकर समुंद्र तक फैली हुई भारत भूमि को अपनी पितृ भूमि, पुण्य भूमि तथा धर्म भूमि मानता है, वही अधिकृत रूप से हिन्दू कहलाने का अधिकारी है।"[4] वास्तव में वे धर्म को राष्ट्रीयता का एक प्रतीक मानते थे जिन लोगों की आस्था हिन्दुत्व की उक्त परिभाषा के बाहर है वे विदेशी होगें, अराष्ट्रीय होगे और भारत भूमि को वे मात्र "भोग भूमि" समझेंगें। 'हिन्दुत्व' नामक अपनी पुस्तक में वे कहते है कि हिन्दुत्व में महान क्षमता है इसमें राष्ट्रीय एकता का आधार प्रजाति समानता में निहित है। हिन्दू धर्म उसकी सांस्कृतिक पौराणिकता के प्रति आस्थावान होने की सच्ची श्रद्धा ही हिन्दुत्व है।

अन्य धर्मो विशेष रूप से भारतीय ईसाई एवं मुसलमान, हिन्दुत्व की परिभाषा में स्थान नहीं पाते चूकि उन्होंने हिन्दुत्व संस्कृति का परित्याग कर दिया है। सावरकर का स्पष्ट मानना है कि केवल भारत भूमि पर रहने मात्र से ही कोई भारतीय नागरिक नहीं हो जाएगा। अगर उसमें इस मातृ भूमि के प्रति निष्ठा का अभाव है और उसके सांस्कृतिक विचार किसी अन्य स्थान, या राष्ट्रीय भूमि से संचालित हैं, तो उसका आचरण हिन्दुत्व धारा के विपरित होगा। निश्चित तौर पर यह कहा जा सकता है कि सावरकर की राष्ट्रीय भावना का केन्द्र बिन्दु भी उनका हिन्दुत्व ही है। वे जीवन पद्धति के सामान्य मूल्यों और परम्पराओं से सांस्कृतिक अनुशासन के कठोर नियमन तक के समस्त सिद्धान्तों एवं व्यवहारों को राष्ट्रीयता मानते हुए, हिन्दुत्व की बुनियाद पर खडा करना चहाते हैं। इसमें सन्देह नहीं है कि सावरकर हिन्दु शब्द को स्वयं में एक राष्ट्रीय अनुभूति मानते हैं। चूंकि वे भारत में हिन्दुत्व आधारित सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के समर्थक एवं पोषक दोनों हैं। उनका सम्पूर्ण दर्शन इसी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के पुनरूत्थान के इर्द–गिर्द संगठित होता है। वे हिन्दुत्व शब्द को भारत की आत्मा के रूप में परिभाषित करते है।

सावरकर का हिन्दुत्व एवं राष्ट्रवाद पर्यायवाची शब्द है

सावरकर के चिन्तन का गम्भीर विश्लेषण बताता है कि दोनों शब्दों के मध्य कोई अन्तर नहीं है अपितु हिन्दुत्व व राष्ट्रीवाद अन्तर अनुशासनात्मक, अन्तर भावनात्मक, अन्तर–एकतत्व के प्रतीक हैं। "भारत ही विष्व में एक राष्ट्र है जिसकी भावना एकता उसके'हिन्दुत्व'पर आधारित भाषा, संस्कृति, वंश धर्म की सम्पूर्ण एकात्मकता का व्यवहारिक रूप है। वंशवादी भेदों के आधार पर कोई

राष्ट्र, राष्ट्र नहीं हो सकता। जहाँ तक राष्ट्र के तत्वों का प्रश्न हैं उसमें उन्होंने वंश भाषा संस्कृति, परम्परायें एक समान मान्य बिन्दू हिन्दूराष्ट्र भारत में पाए जाना स्वीकार किया है। वे हिन्दू प्रजाति को भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक राष्ट्र स्वीकार करते थे।"[5]

हिन्दू राष्ट्रवादी होने के नाते वे हिन्दू समाज की एकता के लिए नैतिक उत्थान के प्रबल समर्थक रहे। साथ ही उन्होंने हिन्दू समाज में फैले धार्मिक आडम्बरों और जातिगत विभेदों का विरोध किया। हिन्दू धर्म में जातिगत भेदभाव अस्पर्शयता को दूर किए हिन्दुत्व के विचार को संगठित असम्भव है ऐसा उनका मानना था। उन्हें सच्चे अर्थो में हिन्दू–पुनरूत्थान के महान भक्त कहना अतिश्योक्तिपूर्ण न होगा। वे कहते थे "जहाँ तक भौतिक और ऐतिहासिक जीवन का सम्बन्ध है, हिन्दू सामान्य संस्कृति, सामान्य इतिहास, सामान्यभाषा, सामान्य देश और सामान्य धर्म के द्वारा परस्पर आबद्ध होने के कारण एक राष्ट्रीय भावना पर राष्ट्र है।

एक कट्टर हिन्दू होने के नाते यद्यपि उनकी सम्पूर्ण चिन्ता और चिन्तन की गम्भीरता हिन्दूवादी थी किन्तु वे ईसाई और मुसलमानों के न तो विरोधी थे और न ही उनसे घृणा करते थे। इस सम्बन्ध में उनकी मान्यता थी कि "मेरी धारणा है कि यद्यपि मानव जाति को अपने अन्तिम राजनीतिक लक्ष्य की राष्ट्रवाद तथा संघवाद के द्वारा अधिकाधिक बड़े राजकीय संगठनों को बढ़ाना चाहिये, तथापि वह लक्ष्य राष्ट्रवाद नहीं है और न ही हो सकता है, वह केवल 'मानवता' हो सकता है।"[6]अर्थात अन्य धर्मो के प्रति उनका व्यवहार मानवतावाद पर आधारित है।

सावरकर के विचारों की वर्तमान प्रासंगिकता

वर्तमान स्वरूप में सावरकर एक महान व्यक्तित्व के रूप में ही नहीं अपितु एक प्रभावशाली "विचारपुन्ज" के रूप में स्वीकृति पा रहे हैं। भारतीय समाज के बहुलवादी स्वरूप के मध्य अल्पसंख्यक व बहुसंख्यक आवधारणाओं द्वारा खींची गयी विभाजन रेखाओं पर सावरकर का चिन्तन स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है। भारतीय चिन्तन के बुनियादी स्वभाव के विपरीत अगर कोई धारा अपना विशेष महत्व रखती है तो वह सावरकर के रूप में रेखांकित है। जहाँ तक उनके जीवन चरित्र के आदर्शो का प्रश्न है वे यह बताते है कि कभी–कभी सामान्य सहमति के विपरित विरोध सम्यक होता है जब उदारता की ऊँचाई शोषण की गहराई में समाने लगे तो उग्रता सत्य हो जाती है। उनका स्पष्ट मानना है कि अल्पसंख्यक वर्गके प्रति जरूरत से ज्यादा तुष्टिकरण, बहुसंख्यक समाज के हितों पर कुठाराघात करता है। अपने हिन्दू, हिन्दुत्व एवं राष्ट्रवादी अवधारणाओं की स्वीकृतियों में भले ही वे सफलता अर्जित न कर सके हो किन्तु हिन्दू महासभा और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और अनेक राजनीतिक दलों के लक्ष्य प्राप्तियों में सावरकर के विचार दिनो दिन स्वीकार्यता वृद्धि की ओर बढ़ रहे है।

सावरकर के हिन्दुत्व सांस्कृतिक राष्ट्रवादी पुनरुत्थान, राष्ट्रीय स्वयं सेवक सघं 1925 से अद्यतन बुनियादी लक्ष्य बना हुआ है और काफी हद तक उन्होंने इस लक्ष्य की प्राप्ति की यात्रा सम्पन्न कर ली है। हमारे राजनीतिक गलियारों में सावरकर का विचार प्रजातान्त्रिक व्यवस्था के भीतर जनमत को प्रभावित कर सत्ता तक पहुँच के लिए बहुमत का साधन बन गया है। जनसंघ और भारतीय जनता पार्टी की वर्तमान शियासत इसी वैचारिक बुनियाद पर खड़ी नजर आती है। बहुसंख्यक हिन्दू समाज की आन्तरिक गतिशीलता का बड़ा स्वरूप उनके विचारों के आत्मसातिकरण की ओर बढ़ रहा है। जन सामान्य के बीच आज पुनः हिन्दुत्व और राष्ट्रवाद एक दूसरे के पर्याय बन गये हैं।[7]

सावरकर अपने विचारों में शान्ति के स्थान पर जिस सम्यक हिंसा का समर्थन करते है। वह धीरे–धीरे सामान्यकरण की ओर बढ़ रही है जो स्वप्न भारतीय राष्ट्र के लिए उनके द्वारा देखा और रचा गया था उसे साकार करने में सामाजिक–राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर मांगे उठने लगी हैं और राजनीति उन मांगो को समाधान तक पहुचाने के लिए प्रयासरत है।

इसमें कतई दो राय नहीं हो सकती कि मौजूदा भारतीय राजनीति एवं समाज में सावरकर का चिन्तन आक्रामकता के साथ बहुसंख्यक समाज में मान्यता पा रहा है।

पिछले कुछ दशकों में गांधी–नेहरू चिन्तन की आलोचना का मुख्य विचार सावरकर ही है। जहाँ तक सावरकर के वैचारिक चिन्तन के हिन्दुत्व, हिन्दूराष्ट्र, हिन्दू धर्म की एकता, मुस्लिम तुष्टिकरण, स्वराज्य और अखण्ड भारत और हिंसा की अनिवार्यता सम्बन्धी विचारों की वास्तविक प्रासंगिकता का मूल्यांकन करे तो स्पष्ट होता है कि समाज का वर्तमान स्वरूप उनके विचारों से अछूता नहीं है। उनके विचार मूल रूप में हिन्दू एकत्रिकरण और हिन्दू राष्ट्रवाद पर बल देते है जो दोनों असम्भव प्रतीत है वर्गो में विभाजित हिन्दू समाज जातियों में विभाजित है और तमाम ऐतिहासिक कुप्रथाएं और शोषणात्मक व्यवहार महान समाजसुधारकों के आव्हानों के पश्चात भी जातिवाद का दन्श हिन्दूत्व पर आधारित राष्ट्रवाद की बुनियाद को खोखला कर रहा है।

सवारकर के विचारों की शक्ति मुख्य विचारों के प्रतिवाद स्वरूप अस्तित्व में आई है, कोई प्रतिवाद अपने वाद के बिना संवाद नही बन सकता, ऐसा प्रतिवाद जो बहुलतावाद के मध्य केवल एकपक्षीय हो जाए और उसका सामान्यीकरण भी हो असम्भव प्रतीत होता है। याद रखना चाहिए कि सावरकर के विचारों के प्रभाव को आने में और उन पर व्यापक जनसहमति एवं स्वीकृति बनने में सात दशकों का समय लग गया है। विचारों की अधिक उग्रता एवं कट्टरता ही वर्तमान प्रासंगिकता में बाधा बन जाती है। एक प्रजातान्त्रिक बहुलवादी समाज में, बहुसंख्यक वर्ग के हितों के पक्षकार बन कर सत्ता प्राप्त कर लेना सच्चे लोकतंत्र का आधार नहीं हो सकता। ऐसी सत्ता लोकतंत्र के नाम पर अधिनायक्त्व का पोषण करती हैं। ऐसे समाजों में राज्य के मौलिक कर्त्तव्य 'शान्ति एवं सुरक्षा' के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है और मानव विकास की चुनौतियां उजागर होने लगती हैं। इससे स्थानीयता, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता में हिसंक होने का दोष उत्पन्न होने लगता है।

इस प्रकार भारतीय समाज में सावरकर के विचारों की प्रासंगिकता इस बात पर निर्भर करेगी कि समाज कितने तार्किक द्वन्द्वों से गुजर रहा है और उनसे उत्पन्न चेतना की स्वीकार्यता में श्रृद्धा और तर्क का सन्तुलन कितना है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एक सीमा तक ठीक है किन्तु उसकी व्यापकता अन्य वर्गो के प्रति हिंसा और शोषण को बढ़ावा देती है। उक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि सावरकर के चिन्तन के हिन्दुत्व में राजनीतिक सत्ता को प्रभावित और प्राप्त करने की अद्भुत क्षमता है, किन्तु उसमें सामान्यीकरण एवं सार्वभौमिकता के चिन्तन बनने का आभाव परिलक्षित होता है। औपनिवेशिक सत्ता के विरूद्ध उनका योगदान अविस्मरणीय है किन्तु उनके चिन्तन की सार्थकता की चुनौतियां और उसके परिणाम आना अभी शेष हैं। आगामी दो दशक सावरकर के विचारों की वर्तमान प्रमाणिकता और प्रासंगिकता के लिए महत्वपूर्ण होगें।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सावरकर का चिन्तन स्वतन्त्रता एवं स्वराज्य का समर्थक है।वह राष्ट्रभक्ति एवं मातृभूमि का प्रबल हामी है। उनके चिन्तन में सत्ताओं को प्रभावित करने और उसे प्राप्त करने की प्रबल क्षमताएं है। किन्तु हिन्दुत्व पर आधारित उनका राष्ट्रवाद उन्हे, भारतीय बहुलवादी समाज की सामान्य परिस्थितियों में न केवल संकीर्णताओं में बांधता है अपितु उनकी स्वीकार्यता और प्रासंगिकता समाज में कई विभाजन रेखाओं पर निर्भर करती है। इससे भारतीय राष्ट्रवाद कमजोर होता प्रतीत होगा।

अतः सावरकर का अति राष्ट्रवाद दीर्घकाल में स्थानीयता, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए भय उत्पन्न करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *सावरकर विनायक दामोदर "हिन्दुत्व", प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली–2020*
2. *डा0 मेहरोत्राएन0 सी0, "वीर सावरकर व्यक्ति एवं विचार", आत्माराम एण्ड संस,दिल्ली–2011*
3. *तंवर रघुवेन्द्र "विनायक दामोदर सावरकर" प्रभात प्रकाश, दिल्ली–2018*
4. *इस्लाम शम्सुल, "सावरकर–हिन्दुत्व मिथक और सच", फारोस मीडिया एण्ड पब्लिकेशन प्रा0लि0 नई दिल्ली–2019*
5. *आर्य कुमार राकेश, "गांधी और सावरकर",डायमण्ड बुक्स (प्रा0) लि0, नई दिल्ली–2017*
6. *सावरकर, दामोदर, विनायक''मेरा आजीवन कारावास'' प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली–2020*
7. *सिंह कुमार मनोज, ''वीर सावरकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व'' अवनी पब्लिकेशन, नई दिल्ली– 2019*